International Journal of Advance and Applied Research
www.ijaar.co.in
ISSN – 2347-7075 Impact Factor – 8.141
Peer Reviewed Bi-Monthly
Vol. 6 No. 40 September - October - 2025

भारत की राष्ट्रीय पहचान में आदिवासी समाज की भूमिका

डॉ. अमर आनंद आलदे[1], डॉ. पंडित खाकरे[2]

[1] *हिन्दी विभागाध्यक्ष, कला व विज्ञान महाविद्यालय, चौसाळा, बीड*

[2] *प्राचार्य, कला व विज्ञान महाविद्यालय, चौसाळा, बीड*

Corresponding Author – डॉ. अमर आनंद आलदे

DOI - 10.5281/zenodo.17656988

भारत की पहचान उसकी विविधता में एकता से होती है। यहाँ भाषाएँ, धर्म, संस्कृतियाँ, परंपराएँ अलग-अलग हैं, लेकिन इन सबका संगम ही "भारतीय राष्ट्रीयता" कहलाता है। इस राष्ट्रीय पहचान के निर्माण में आदिवासी समाज ने मौन लेकिन गहरा योगदान दिया है। भारत का आदिवासी समाज अपने स्वाभाविक जीवन, संघर्षशीलता, पर्यावरणीय दृष्टिकोण, सांस्कृतिक धरोहर और स्वतंत्रता आंदोलन में दिए गए बलिदानों के कारण हमारी राष्ट्रीय चेतना का अभिन्न अंग बन चुका है।

भारत की राष्ट्रीय पहचान उसकी ऐतिहासिक परंपराओं, सांस्कृतिक विविधता, सामाजिक मूल्यों और राजनीतिक संघर्षों के समन्वय से निर्मित हुई है। इस पहचान के निर्माण और विकास में आदिवासी समाज की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। आदिवासी समुदाय, जिन्हें भारत की मूलनिवासी सभ्यताओं के रूप में देखा जाता है, अपनी जीवनशैली, संघर्षशीलता और प्रकृति-आधारित दर्शन से भारत की पहचान को विशेष स्वरूप प्रदान करते हैं।

आज जबकि भारत एकता में विविधता के वैश्विक प्रतीक के रूप में देखा जाता है, उसमें आदिवासी समाज की सांस्कृतिक धरोहर, स्वतंत्रता संग्राम में दिया गया योगदान, पर्यावरण संरक्षण की जीवनशैली तथा लोकतांत्रिक मूल्यों की जड़ों को पुष्ट करने वाली परंपराएँ अनदेखी नहीं की जा सकतीं।

भारत में आदिवासियों का इतिहास संघर्ष का इतिहास रहा है। सदियों पहले आदिवासियों को सभ्यता से बहिष्कृत कर जंगलों में धकेल दिया गया। इन समुदायों ने जंगलों में रहते हुए अपने संस्कृति की विरासत कायम रखी और पूरे आत्म सम्मान के साथ जीते रहे। इसी संदर्भ में रमणिका गुप्ता ने लिखा है, "एक पराजित समूह होते हुए भी आदिवासियों ने अपनी संस्कृति, भाषा, अपने जीने की सामूहिक शैली, परंपराओं और रीति रिवाजों की विरासत को जिंदा रखा है जब-जब आदिवासियों के संस्कार, रीती-रिवाज, परंपरा एवं अस्मिता को नष्ट करने का प्रयास किया है तब- तब यह लोग बाहरी घुसपैठ के खिलाफ उठ खड़े हुए हैं।" भारत में आदिवासियों का इतिहास संघर्ष का इतिहास रहा है सदियों पहले आदिवासियों को सभ्यता से बहिष्कृत कर जंगलों में धकेल दिया गया इन जन-समुदायों ने जंगलों में रहते हुए अपने संस्कृति की विरासत कायम रखी और पूरे आत्म सम्मान के साथ जीते रहे इसी संदर्भ में रमणिका गुप्ता ने देखा है एक पराजित समूह होते हुए भी आदिवासियों ने अपनी

संस्कृति भाषा अपने जीने की सामूहिक शैली परंपराओं और रीति रिवाज की विरासत को जिंदा रखा है जब-जब आदिवासियों के संस्कार रीती रिवाज परंपरा एवं अस्मिता को नष्ट करने का प्रयास किया है, तब-तब यह लोग बाहरी घुसपैठ के खिलाफ उठ खड़े हुए हैं।

असल में आदिवासियों की अस्मिता का प्रश्न उनके जल, जंगल, जमीन तथा प्राकृतिक संसाधनों के अधिकारों से जुड़ा हुआ है। इनकी रक्षा के बिना उनकी अस्मिता की रक्षा नहीं हो सकती । आदिवासियों के पास अगर जंगल और जमीन ना हो तो उस आदिवासी की पहचान ही खत्म हो जाती है । अंग्रेजों से लेकर शोषण के तमाम तंत्रों ने आदिवासियों पर अत्याचार किया। अपनी धूमिल अस्मिता व आत्मसम्मान को बचाने के लिए आदिवासियों ने अंग्रेजी राज में कड़ा संघर्ष किया । आदिवासी क्षेत्र में अंग्रेजों के द्वारा अतिक्रमण के विरोध में आवाज भी उठी । अंग्रेजों के पक्षपात, अन्याय और अत्याचार के खिलाफ 'कोल विद्रोह ' (1785 ई.), 'संथाल विद्रोह' (1855 ई.) 'मुण्डा विद्रोह' (1980 ई.) आदि अनेक जन आंदोलन हुए । इन आंदोलनों के माध्यम से आदिवासियों ने अपनी अस्मिता, अधिकारों, जीवन एवं भूमि की सुरक्षा के साथ अपने सम्मान व अस्तित्व को पुनः स्थापित किया। रूपचंद्र वर्मा ने 'कोल विद्रोह' के संबंध में लिखा है-" इसे 1857 की महान क्रांति की पूर्व का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम कहा जा सकता है। " 'मुंडा विद्रोह' सेठ साहूकारों द्वारा आदिवासियों के शोषण के विरुद्ध तीखा आक्रोश था जो आदिवासी अस्मिता के उदय में मिल का पत्थर साबित हुआ। मुंडा विद्रोह के संबंध में नदीम हसनैन ने लिखा है "सभी प्रकार के शोषण और अत्याचारों की विरुद्ध मुंडा विद्रोह भी जनजातीय आक्रोश का उत्कृष्ट उदाहरण है।" इस तरह आदिवासियों ने हमेशा शोषण का विरोध किया।

आदिवासी समाज का परिचय:

भारत में आदिवासी समाज लगभग 8.6% जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करता है (जनगणना 2011 के अनुसार)।

प्रमुख जनजातियाँ: भील, गोंड, संथाल, उरांव, मुंडा, खासी, नागा, मिजो, कोल इत्यादि।

भौगोलिक विस्तार:

- **मध्य भारत:** (मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड, ओडिशा)
- **पूर्वोत्तर भारत**: (नागालैंड, मणिपुर, मिजोरम, त्रिपुरा)
- **पश्चिमी भारत** (गुजरात, राजस्थान)
- **दक्षिण भारत** (आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल)।

आदिवासी समाज की जीवनशैली मुख्यतः प्रकृति-आधारित है। जंगल, पहाड़, नदी, पशु-पक्षी इनके जीवन का अभिन्न हिस्सा हैं। इसी कारण भारतीय जीवन-दर्शन में "प्रकृति और मनुष्य का सहअस्तित्व" इस अवधारणा को आदिवासी संस्कृति से बल मिलता है और यह विशिष्ट पहचान ही भारत की राष्ट्रीय संस्कृति को जड़ों से जोड़ती है।

सांस्कृतिक योगदान:

भारत की राष्ट्रीय पहचान का सबसे बड़ा आधार उसकी सांस्कृतिक विविधता है। आदिवासी समाज ने इस क्षेत्र में बहुमूल्य योगदान दिया है।

(अ) लोकनृत्य और संगीत:- आदिवासी उत्सव भारत की सांस्कृतिक विविधता को जीवंत बनाते हैं।

- **संथालों का सरहुल नृत्य -** सरहुल, जिसे संथालों में 'बा' के नाम से भी जाना जाता है, एक प्रमुख आदिवासी पर्व है जो प्रकृति और परंपरा का

संगम है। यह त्यौहार मुख्य रूप से झारखंड, पश्चिम बंगाल, ओडिशा, छत्तीसगढ़ और मध्य भारत के आदिवासी क्षेत्रों में मनाया जाता है, विशेष रूप से मुंडा, भूमिज, हो, संथाल और उरांव जैसी जनजातियों द्वारा. सरहुल का अर्थ है साल वृक्ष की पूजा, और यह सूर्य और पृथ्वी के मिलन का प्रतीक है, जहाँ वसंत ऋतु का स्वागत किया जाता है।

- **गोंडों का करमा नृत्य -** करमा नृत्य में माँदर और टिमकी दो प्रमुख वाद्य होते हैं जो एक से अधिक तादाद में बजाये जाते हैं। वादक नाचने वालों के बीच में आकर वाद्य बजाते हैं और नाचते हैं। बजाने वालों का मुख हमेशा नाचने वालों की तरफ होता है।
- **नागाओं का हॉर्नबिल उत्सव -** नागा जनजातियों की संस्कृति का वैश्विक प्रदर्शन हॉर्नबिल उत्सव के माध्यम से होता हैं। इस महोत्सव का उद्देश्य नागालैंड की समृद्ध संस्कृति को पुनर्जीवित और संरक्षित करना तथा इसकी भव्यता और परंपराओं को प्रदर्शित करना है। आगंतुकों के लिए इसका मतलब नागालैंड के लोगों और संस्कृति को करीब से समझना और नागालैंड के भोजन, गीतों, नृत्यों और रीतिरिवाजों का अनुभव करने का अवसर हैं। इसे त्योहारों का महोत्सव भी कहा जाता हैं।
- **भीलों का गवरी नृत्य, (राजस्थान, भील समाज)** – गवरी नृत्य, जिसे राई नृत्य भी कहा जाता है, राजस्थान के मेवाड़ क्षेत्र में भील जनजाति द्वारा किया जाने वाला एक प्रसिद्ध लोकनृत्य है। यह नृत्य भगवान शिव और पार्वती को समर्पित है।
- **उरांवों का जवा नृत्य -** उरांव जनजाति का जवा नृत्य करम पूजा के अवसर पर किया जाता है। यह नृत्य भादो, आश्विन, और कार्तिक के महीनों में होता है। जवा नृत्य में जावा जगाने, करम का स्वागत, और करम को काटना, लाना, गाड़ना, और विसर्जन जैसे विभिन्न अवसरों के लिए अलग-अलग गीत और नृत्य होते हैं। ये सभी भारतीय संस्कृति की अद्वितीय झलक प्रस्तुत करते हैं।

(ब) लोककला:

- **वारली चित्रकला (महाराष्ट्र)** – सरल रेखाओं से जीवन और प्रकृति का चित्रण। वारली चित्रकला महाराष्ट्र की एक प्रसिद्ध लोक चित्रकला है जो वारली जनजाति द्वारा बनाई जाती है। यह कला मुख्य रूप से सरल ज्यामितीय आकृतियों, जैसे वृत्त, त्रिभुज और रेखाओं का उपयोग करके दैनिक जीवन, रीतिरिवाजों-, और प्रकृति के दृश्यों को दर्शाया जाता है। वारली चित्रकला न केवल एक कला रूप है, बल्कि यह वारली लोगों के जीवन, विश्वासों, और परंपराओं को भी दर्शाती है। वारली चित्रकला अब न केवल भारत में, बल्कि दुनिया भर में प्रसिद्ध है।
- **पिथोरा चित्रकला (गुजरात-एमपी)** – अनुष्ठानिक, धार्मिक और रंग-बिरंगी लोककला का प्रतीक। पिथोरा चित्रकला गुजरात और मध्य प्रदेश में राठवा, भील, और अन्य जनजातियों द्वारा बनाई जाने वाली एक अनुष्ठानिक चित्रकला है। यह चित्रकला मुख्य रूप से भगवान पिथोरा और उनके जुलूस को दर्शाती है,

और इसे घरों में शांति, समृद्धि, और खुशहाली लाने के लिए बनाया जाता है। यह चित्रकला हजारों साल पुरानी है और गुफा चित्रों से विकसित हुई है। पिथोरा चित्रकला को बनाने के लिए प्राकृतिक रंगों का उपयोग किया जाता है, और इसे दीवारों पर बनाया जाता है। चित्रकला में जटिल पैटर्न और रेखाएं होती हैं.

- **भील पेंटिंग, गोंड पेंटिंग – गोंड कला** गोंड से उत्पन्न हुई है, जो सबसे बड़ा **आदिवासी समुदाय** है , जो **मध्य प्रदेश** और आसपास के राज्यों में पाया जाता है। जबकि दूसरी ओर, **भील को गोंड के बाद दूसरा सबसे बड़ा आदिवासी समुदाय माना जाता है। वे मध्य प्रदेश, गुजरात, राजस्थान और महाराष्ट्र** राज्यों में पाए जाते हैं , और इस प्रकार गोंड की तुलना में व्यापक रूप से फैले हुए हैं। गोंड कला में **मराठी देवी और फुलवारी देवी** जैसे भगवान और देवी को दर्शाया गया है, जबकि भील कला में उनके जीवन से जुड़ी हर चीज को दर्शाया गया है जैसे सूर्य, चंद्रमा, जानवर, पेड़, नदियाँ, क्षेत्र, पौराणिक देवता और उनके भगवान क्योंकि यह समुदाय प्रकृति के ज्यादा करीब है। पारंपरिक चित्रकार या **लेखिंद्र** अक्सर देवी को भेंट के रूप में **पिथौरा घोड़ा** चित्रित करते हैं। गोंड कला के मूल कलाकार **जंगढ़ सिंह श्याम** हैं , जिन्होंने कैनवास पर चित्रकारी शुरू की, आदिवासी कला को विश्व स्तर पर प्रतिष्ठा दिला चुकी हैं।

(क) जीवन-दर्शन:

आदिवासी समाज प्रकृति को देवता मानता है। पर्वत, नदियाँ, वृक्ष और पशु इनके धार्मिक-आध्यात्मिक जीवन का हिस्सा हैं। यह दर्शन आज के सतत विकास और पर्यावरण संरक्षण के विचार से गहराई से जुड़ा हुआ है।

स्वतंत्रता आंदोलन में योगदान

भारत की राष्ट्रीय पहचान स्वतंत्रता संग्राम और स्वराज की भावना से भी जुड़ी है। आदिवासी समाज ने अंग्रेज़ी हुकूमत और अन्य शोषक शक्तियों के विरुद्ध कई आंदोलनों का नेतृत्व किया।

- **बिरसा मुंडा (1875-1900)** – "उलगुलान" आंदोलन का नेतृत्व किया। बिरसा मुंडा के नेतृत्व में उलगुलान एक व्यापक आंदोलन था जो न केवल राजनीतिक मुक्ति के लिए था, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक सुधारों के लिए भी था. इस आंदोलन का उद्देश्य ब्रिटिश शासन से स्वतंत्रता प्राप्त करना, आदिवासी भूमि अधिकारों की रक्षा करना, और आदिवासी समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना था.
- **सिधो-कान्हो आंदोलन (1855-56)** – संथाल विद्रोह ने अंग्रेजों को हिला कर रख दिया। 30 जून 1855 को, दो संथाल विद्रोही नेताओं, सिद्धू मुर्मू और कान्हू मुर्मू ने लगभग 60,000 संथालों को लामबंद **(लामबंद का अर्थ है किसी विशेष उद्देश्य के लिए लोगों, संसाधनों या सेना को संगठित करना और तैयार करना)** किया और ईस्ट इंडिया कंपनी के खिलाफ विद्रोह की घोषणा की। सिद्धू मुर्मू ने विद्रोह के दौरान समानांतर सरकार चलाने के लिए लगभग दस हजार संथालों को जमा किया था। उनका मूल उद्देश्य अपने स्वयं के कानूनों को बनाकर और लागू करके कर (लगान) एकत्र करना था।

- **तिलका मांझी (1771-1785) -** तिलका मांझी (या जबरा पहाड़िया(ने 1771 से 1784 तक अंग्रेजों के खिलाफ आदिवासियों के विद्रोह का नेतृत्व किया। विद्रोह का मुख्य उद्देश्य आदिवासी स्वायत्तता की रक्षा करना, अपने क्षेत्र से अंग्रेजों को खदेड़ना और शोषणकारी नीतियों का विरोध करना था। तिलका मांझी ने 1784 में भागलपुर के ब्रिटिश कलेक्टर ऑगस्टस क्लीवलैंड को तीर मारकर घायल कर दिया था। अंग्रेजों ने तिलका मांझी को पकड़ने के लिए एक साथी को लालच देकर मिला लिया। उन्हें 13 जनवरी 1785 को भागलपुर में एक बरगद के पेड़ से लटकाकर फांसी दे दी गई। तिलका मांझी को भारत के पहले स्वतंत्रता सेनानियों में से एक माना जाता है।
- **रानी दुर्गावती (16वीं सदी)** – रानी दुर्गावती 16 वीं सदी की एक महान शासिका थीं, जिन्होंने गोंडवाना क्षेत्र पर शासन किया और मुगल बादशाह अकबर के खिलाफ वीरतापूर्वक लड़ाई लड़ी। 1564 में, आसफ खान ने फिर से हमला किया, और इस बार रानी दुर्गावती ने व्यक्तिगत रूप से युद्ध का नेतृत्व किया। युद्ध में घायल होने के बाद, उन्होंने आत्मसमर्पण करने के बजाय अपनी जान देना उचित समझा। रानी दुर्गावती को महिला नेतृत्व और सशक्तिकरण का एक शक्तिशाली प्रतीक माना जाता है।
- **आलुरी सीताराम राजू (1922-24)** – आंध्र प्रदेश में रम्पा विद्रोह का नेतृत्व। 'अल्लूरी सीताराम राजू' महात्मा गांधीजी के एक महान अनुयायी थे। जब औपनिवेशिक सरकार ने पहाड़ी लोगों को सड़क निर्माण के लिए बेगार देने के लिए मजबूर करना शुरू किया, तो उन्होंने विद्रोह कर दिया। यहाँ अल्लूरी सीताराम राजू अंग्रेजों के खिलाफ उनका नेतृत्व करने के लिए आए। रम्पा विद्रोह का नेतृत्व किया था, जो ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के खिलाफ था. यह विद्रोह मुख्य रूप से मद्रास वन अधिनियम के खिलाफ था, जिसने आदिवासियों के वन संसाधनों के उपयोग और झूम खेती पर प्रतिबंध लगा दिया था. राजू ने गुरिल्ला युद्ध का इस्तेमाल किया और ब्रिटिश पुलिस स्टेशनों और सरकारी कार्यालयों पर हमले किए.

सामाजिक और नैतिक मूल्य:

आदिवासी समाज का जीवन भारतीय संविधान और राष्ट्रीय आदर्शों से सामंजस्य रखता है।

1. समानता और बंधुत्व – जातिगत ऊँच-नीच का अभाव।
2. सामूहिकता – श्रम और संसाधनों का सामूहिक उपयोग।
3. महिला सम्मान – खासी समाज (मेघालय) मातृसत्तात्मक है।
4. प्रकृति संरक्षण – "जंगल हमारा जीवन है" की धारणा।

ये मूल्य भारतीय राष्ट्रीय पहचान में लोकतंत्र, समानता और पर्यावरणीय संतुलन की आधारशिला रखते हैं।

राष्ट्रीय राजनीति और संविधान में भूमिका:

- स्वतंत्र भारत में आदिवासी समाज को विशेष स्थान दिया गया।

- संविधान सभा में जयपाल सिंह मुंडा ने आदिवासी समाज की आवाज बुलंद की।
- अनुसूचित जनजाति आयोग, पेसा अधिनियम (1996), वनाधिकार कानून (2006) – आदिवासी अधिकारों की रक्षा करते हैं।
- आजादी के 75 वर्ष बाद भारत ने **द्रौपदी मुर्मू** को प्रथम आदिवासी महिला राष्ट्रपति बनाकर राष्ट्रीय पहचान में उनकी भूमिका को सम्मानित किया।

पर्यावरण और सतत विकास में योगदान:

आज जब दुनिया जलवायु संकट से जूझ रही है, आदिवासी समाज का जीवन आदर्श प्रस्तुत करता है।

- जंगलों को संरक्षित करना,
- औषधीय पौधों का ज्ञान,
- नदियों और पहाड़ों की पूजा,
- चिपको आंदोलन और नर्मदा बचाओ आंदोलन जैसे पर्यावरण आंदोलनों में सहभागिता—

ये सभी आदिवासी जीवनदृष्टि की देन हैं, जो भारत की पर्यावरणीय पहचान को मजबूत करते हैं।

समकालीन चुनौतियाँ:

आदिवासी समाज आज भी अनेक समस्याओं से जूझ रहा है:

- विस्थापन (बड़े बांध और खनन परियोजनाएँ),
- गरीबी और अशिक्षा,
- शोषण और उपेक्षा,
- मुख्यधारा से दूरी।

इन चुनौतियों का समाधान करना भारत की राष्ट्रीय पहचान को और सशक्त बनाने की दिशा में आवश्यक कदम है।

उदाहरण और समकालीन उपलब्धियाँ:

1. कला – वारली और गोंड कला को अंतरराष्ट्रीय मंचों पर प्रदर्शित किया गया।
2. खेलकूद – मेरीकॉम (मणिपुर), दीपा कर्माकर (त्रिपुरा), जयपाल सिंह मुंडा (हॉकी) ने भारत को वैश्विक स्तर पर पहचान दिलाई।
3. साहित्य – महाश्वेता देवी जैसी लेखिकाओं ने आदिवासी जीवन की समस्याओं को राष्ट्रीय विमर्श का हिस्सा बनाया। 'जंगल के दावेदार' यह उपन्यास बिरसा मुंडा के जीवन और संघर्ष पर आधारित है, जो ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के खिलाफ आदिवासी विद्रोह के नेता थे. यह उपन्यास आदिवासी समाज के संघर्ष को दर्शाता है और शिक्षा, अधिकार और न्याय के लिए उनकी लड़ाई को उजागर करता है.
4. राजनीति – द्रौपदी मुर्मू का राष्ट्रपति पद तक पहुँचना।

निष्कर्ष:

भारत की राष्ट्रीय पहचान केवल राजनीतिक स्वतंत्रता या आर्थिक प्रगति पर आधारित नहीं है, बल्कि यह उसकी सांस्कृतिक विविधता, ऐतिहासिक संघर्ष और सामाजिक मूल्यों पर भी टिकी है। इस संपूर्ण प्रक्रिया में आदिवासी समाज की भूमिका अनिवार्य और ऐतिहासिक है। आदिवासी समाज ने—अपनी संस्कृति और कला से भारत की सांस्कृतिक पहचान को, अपने

संघर्ष और बलिदानों से राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन को, अपने जीवन मूल्यों से लोकतंत्र और समानता को, तथा अपने प्रकृति प्रेम से पर्यावरणीय चेतना को सशक्त किया। आज आवश्यकता है कि आदिवासी समाज को केवल "विकास की दौड़ में पीछे छूटे वर्ग" के रूप में न देखकर "भारत की मूल आत्मा और राष्ट्रीय पहचान के निर्माता" के रूप में देखा जाए। तभी भारत की राष्ट्रीय एकता और विविधता का संतुलन और भी सशक्त रूप में उभर सकेगा। इसलिए, आदिवासी समाज को केवल "हाशिए पर खड़ा समुदाय" नहीं बल्कि "भारत की आत्मा और राष्ट्रीय पहचान का स्तंभ" माना जाना चाहिए।

संदर्भ :

1. आदिवासी दुनिया- हरिराम मीणा
2. जनजातीय भारत- नदीम हसनैन
3. जनगणना रिपोर्ट, भारत सरकार, 2011।
4. "भारत का आदिवासी इतिहास" – रामचंद्र गुहा।
5. "आदिवासी और भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन" – श्यामलाल।
6. महाश्वेता देवी – "जंगल के दावेदार"।
7. पेसा अधिनियम, 1996; वनाधिकार कानून, 2006।